IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 10, Issue 1, October 2020
Impact Factor: 4.819

"श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित नैतिक मूल्य"

डॉ. कीर्ति शुक्ला

असिस्टेंट प्रोफेसर- संस्कृत

राजकीय महाविद्यालय, मानिकपुर, जनपद- चित्रकूट (उत्तर प्रदेश)

नैतिक का शाब्दिक अर्थ है 'नीति संबंधी'। सामान्य रूप से नैतिकता नीति के वृहत्तम अर्थो जिसका उद्देश्य मानवीय चरित्र का निर्माण करना होता है अतः नैतिकता को सामान्यतया चरित्र और आचरण के परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है जब मूल्य की बात होती है तो हम कहते हैं की सच्चाई, ईमानदारी, वफादारी माता-पिता का आदर आदेश के अंतर्गत आते हैं। नैतिक मूल्य मानवीय मूल्य है जो व्यक्ति के विवेक बुद्धि पर आश्रित होते हैं तथा जिनके माध्यम से व्यक्ति कर्तव्य-अकर्तव्य का भली-भांति परीक्षण करके लोक कल्याणार्थ कार्य करता है ।इसी के आलोक में श्रीमद् भागवत गीता के कुछ प्रतिपादित, कुछ नैतिक मूल्य जैसे सत्य ,अहिंसा, अस्तेय ,दान ,तप, क्षमा तितिक्षा आदि पर प्रकाश डालते हुए यह ज्ञात होता है कि सृष्टि काल से लेकर आज तक मनुष्य विकास की उच्चतर एवं उदात्ततर पद की पराकाष्ठा को प्राप्त करता चला आ रहा है। इसके मूल में अनेकानेक कर्म को चिन्हित किया जा सकता है किंतु उनमें धर्म को मूल तत्व माना जा सकता है जिसमें नैतिक मूल्यादि आचार शास्त्रीय तत्वों का समायोजन किया गया है। श्रीमद् भागवत गीता भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों की उन्नति हेतु एक आदर्श ग्रंथ है। यह किसी जाति वर्ग अथवा संप्रदाय का ग्रंथ ना होकर मानव मात्र के अभ्युदय का साधन है इसमें निहित नैतिक मूल्यों का पालन करने सामाजिक सद्भाव बनाने में पूर्ण सहायता मिलेगी। यह सत्य नैतिक मूल्य के अंतर्गत आता है जिसका सामान्य अर्थ होता है यथार्थ का कथन या दर्शन। गीता में सत्य को

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 10, Issue 1, October 2020
Impact Factor: 4.819

प्राणी मात्र में उत्पन्न होने वाला एक भाव कहा गया है। भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि यह सत्य आदि को जो अनेक प्रकार के भाव है यह मुझसे ही उत्पन्न होते हैं-

बुद्धिर्ज्ञानसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।

सुखं दुखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च।

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः।

भवन्ति भावा भूतानां मत्त एवं पृथाग्विधाः।[1]

अहिंसा का समर्थन सभी ग्रंथों में किया गया है इसे मानव का सर्वश्रेष्ठ धर्म बताया गया है ।अहिंसा का अर्थ केवल हिंसा न करना ही नहीं बल्कि मन कर्म एवं वचन से किसी भी जीव का अहित न करना है। गीता में अहिंसा को ज्ञान तथा हिंसा को आज्ञा कहा गया है। यह एक ऐसा मूल्य है जिससे समाज में सुख शांति बनी रहती है तथा लोग एक दूसरे से प्रेमपूर्वक व्यवहार करते हैं इसीलिए प्राणी मात्र को किसी भी प्रकार का कष्ट न पहुंचना अहिंसा कहा गया है-

अमानित्वमदाम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम।[2]

अस्तेय भी एक नैतिक मूल्य है जिसका सामान्य अर्थ होता है- चोरी न करना, अर्थात दूसरों की वस्तु को उनकी अनुमति के बिना ग्रहण न करना। गीता के अनुसार यज्ञादि कर्मों के अनुकूल आचरण न करने वाले को 'स्तेन' कहा जाता है अर्थात अपने कर्तव्य को न करना चोरी है ।इसको समाज में निंदा की दृष्टि से देखा जाता है ।गांधी जी ने शारीरिक ,मानसिक, वैचारिक आदि किसी भी प्रकार की चोरी न करने को अस्तेय कहा है।[3]

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।

तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो तो भुङक्ते स्तेन एव सः।।[4]

हमारी संस्कृति में दान देने को उत्तम कार्य माना गया है ।दान का तात्पर्य है- दान देने वाला ,दान देने वाली वस्तुओं के ऊपर से अपना अधिकार हटा लेता है।[5] गीता में दान को दैवी संपत्ति बताया गया है । समाज में यदि सुपात्र अर्थात देने योग्य व्यक्ति को श्रद्धापूर्वक दान दिया जाए तभी वह

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 10, Issue 1, October 2020
Impact Factor: 4.819

सफल कहलाता है [6], अन्यथा जिसके पास सब कुछ है ,साधन संपन्न है ,उसको दान देने से क्या लाभ ? इसलिए यदि निर्धन या निर्बल व्यक्ति को दान दिया जाए तो सामाजिक समरसता बनी रहेगी अन्यथा अपात्र को दान देना सामाजिक वैमनस्य को बढ़ावा देना है ।दान देना श्रद्धा का विषय है। निष्काम भाव से अपनी आय का कुछ भाग याचक को देना ही दान कहलाता है। गीता में श्रद्धा पूर्वक दान देने को ही कल्याणकारी माना गया है।

अश्रद्धया हुतं दत् तपस्तप्तं कृतं च मत।

असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।।[7]

जीवन में अनेक बार द्वंदात्मक परिस्थितियां मानव के सम्मुख उपस्थित होती हैं इन्हीं द्वंदात्मक परिस्थितियों को सहन करना ही तप है अर्थात जीवन में प्रतिकूलता की स्थिति उत्पन्न होने पर धैर्य धारण करना अर्थात धैर्यपूर्वक उसको पार कर जाना तप है ।हमें अपने कर्तव्य का पालन करते रहना चाहिए ।यदि उसमें कभी प्रतिकूल परिस्थितियां उत्पन्न हो जाए तो संयम से उनसे उबरने का प्रयास करना चाहिए ।गीता में शारीरिक ,मानसिक तथा वाचिक भेद से तीन प्रकार के तप का वर्णन किया गया है ।कर्तव्य पालन के साथ यदि कुछ कष्ट आ जाए ,प्रतिकूल परिस्थितियां उत्पन्न हो जाए तो उन सभी को धैर्यपूर्वक सहन करने को 'तप' कहा गया है।[8] गीता में भी अपने धर्म का पालन करते समय होने वाले कष्ट को सहन करना ही तप कहा गया है--

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्याय स्तप आर्जवम।[9]

व्यक्ति का सबसे बड़ा आभूषण क्षमा है [10] ,क्षमा से व्यक्त की सहनशीलता का परिचय मिलता है ।कोई भी व्यक्ति हमारे प्रति चाहे जितना अपराध करें समर्थ होने पर भी हम उसे सहन करने तथा उस व्यक्ति को स्वयं परमात्मा की ओर से ही इहलोक में एवं परलोक दोनों ही जगह दंड न मिले इस प्रकार का भाव रखने का नाम क्षमा है । [11]किसी भी प्रकार का अपराध करने पर पीड़ित व्यक्ति में सामर्थ्यवान होने पर भी अपराध करने वाले के प्रति बदले की भावना का न होना ही क्षमा कहा गया है।[12]

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 10, Issue 1, October 2020
Impact Factor: 4.819

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में सहनशीलता का भी उपदेश दिया है जिसे 'तितिक्षा' कहा गया है- शीत-उष्ण ,इंद्रियों से मिलने वाले सुख -दुख ,राग- द्वेष ,जन्म -मरण, लाभ -,हानि इत्यादि जो द्वंद हैं ये शरीर के होते हैं आत्मा के नहीं ।अतः: इनको सहन कर जाना ही तितिक्षा है-

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।

आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारतः।।[13]

शम भी एक मानवीय मूल्य है। जिससे लोगों को संयमित जीवन व्यतीत करने में सहायता मिलती है। अंतःकरण मन को कहा जाता है इसी अंतःकरण को संयमित एवं नियंत्रित करना ही शम कहलाता है। गीता में शम को दैवी संपत्ति कहा गया है।[14] प्रत्येक इंद्रियां अपने विषय की ओर आकृष्ट होती हैं। अतः आत्म साक्षात्कार के लिए इंद्रियों को अपने विषयों से हटाकर उन पर अपना नियंत्रण स्थापित करना ही दम कहलाता है। दम को गीता में व्यक्ति का स्वाभाविक कर्म माना गया है-

शमो दमस्ततः शौच क्षान्तिरार्जवमेव च।[15]

योग साधना में चित्त का महत्वपूर्ण स्थान होता है। चित्त चंचल होता है चित्त की वृत्तियों को विषयों से हटा लेना ही उपरति है। गीता में कार्य कुशलता को योग कहा गया है-

योगः कर्मसु कौशलम्।

योग आत्मा को परमात्मा से जोड़ने का एक माध्यम है। योग के द्वारा पुरुष अपनी इंद्रियों के समस्त व्यवहार को वाह्य जगत से हटाकर परमात्मा की ओर उन्मुख करने का प्रयास करता है। गीता के समस्त सांसारिक सुखों का त्याग कर आत्मतत्व में रत रहने वाले को योगी कहा गया है। योग सूत्र में चित्त के व्यापारों पर नियंत्रण को ही योग कहा गया है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।[16]

इस प्रकार श्रीमद्भगवतद्गीता में नैतिक मूल्य के सभी तत्व विद्यमान है। एक प्रकार से कहा जा सकता है की श्रीमद्भगवद्गीता नैतिक मूल्यों का आदि स्रोत है जिसमें बताए गए नैतिक मूल्यों व

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 10, Issue 1, October 2020
Impact Factor: 4.819

विचारों को मनुष्य अपने जीवन में अपनाकर देश तथा समाज में प्रेम तथा सद्भाव के वातावरण को स्थापित कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. गीता -10/4-5
2. गीता- 13/7
3. नीति शास्त्र के मूल सिद्धांत पृष्ठ 368
4. गीता- 3/12
5. गीता -10/4, 16/1
6. साधक संजीवनी टीका पृष्ठ 675
7. गीता -17/28
8. साधक संजीवनी टीका पृष्ठ 675
9. गीता- 16/1
10. गीता – 10/4
11. साधक संजीवनी टीका पृष्ठ 675
12. तत्व - विवेचनी पृष्ठ 356
13. गीता – 2/14
14. गीता- 16/1
15. गीता- 18/42
16. योग सूत्र- 1/2